रामनाम रसभीनी

कुण्डलियाँ

गीतांजलि

कलम की सुगंध
अर्णव कलश एसोसिएशन

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन

राम नाम रस भीनी

(कलम की सुगंध छंदशाला)

गीताजंलि

अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन
वारासिवनी, मध्यप्रदेश

978-93-5372-227-2
संपादक- अनिता मंदिलवार "सपना"
आवरण चित्र - संदीप कुमार सोनी, वारासिवनी
मुख्य कार्यालय- डॉ. प्रीति समकित सुराना, 15 नेहरू चौक, वारासिवनी,
जिला बालाघाट (म.प्र.) 481331
मोबाईल- 9424765259, 9009465259
ईमेल- antrashabdshakti@gmail.com
वेबसाईट- www.antrashabdshakti
प्रथम संस्करण- 2020, "गीताजंलि"
मूल्य- 90.00 रूपये
मुद्रक- शैलू कम्प्यूटर्स, वारासिवनी
THE BOOK WRITTEN BY GITANJALI

वैधानिक चेतावनीः- इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है। लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकॉपी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम में अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुनरूत्पादित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता है। प्रस्तुत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई है। अतः प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु लेखक जिम्मेदार है। प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र, भाषाशैली एवं स्थान सभी लेखक की कल्पना है। किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

समर्पण

राम-कथा
से मेरा परिचय
मेरी नानी
श्रीमती शांति देवी
की गोद में हुआ था।
जब भी मैं उनके घर जाती,
तो उन्हें रामायण पढ़ते पाती।
उन्हीं के साथ सत्संग जाना प्रारम्भ किया,
उनके और माँ के संग रामायण को
स्वयं पढ़ा, गाया और समझा।
यह प्रथम कृति उन्हीं की स्मृति में
समर्पित कर रही हूँ!

भूमिका

बातें अनकही कहती है आप हँसो हर हाल।
कहती सपना है यही, आप रहो खुशहाल।।

कलम की सुगंध छंदशाला के द्वारा समय समय पर छंद विधाओं पर शतकवीर आयोजन होता रहता है। इसके पहले दोहा, रोला, चौपाई, कुण्डलियाँ शतकवीर का सफल आयोजन हो चुका है। आगे भी कई विधाओं पर शतकवीर का आयोजन करने का विचार प्रस्तावित है। ये सभी आयोजन पटल के संस्थापक आदरणीय गुरू संजय कौशिक विज्ञात जी के निर्देशन में संपन्न होते रहें है।

इस बार शतकवीर आयोजन में शामिल रचनाकारों की सौ कुण्डलियों को पुस्तक रूप देने की योजना आदरणीय संजय कौशिक विज्ञात जी के निर्देशानुसार कलम की सुगंध ने अंतरा शब्द शक्ति प्रकाशन के सौजन्य से प्रकाशित करने की योजना बनाई। आदरणीया प्रीति सुराना जी ने सहर्ष स्वीकार किया। हम उनके बहुत आभारी हैं।

इसी क्रम में आदरणीया "गीताजंलि अनकही" जी का एकल संग्रह **"राम नाम रस भीनी कुण्डलियाँ"** प्रकाशन में है। सर्वप्रथम आदरणीया "अनकही" जी को हार्दिक शुभकामनाएँ और बधाइयाँ। आदरणीया "अनकही" जी की साहित्य साधना अनवरत जारी है। कुण्डलियाँ जैसे कठिन छंद विधा पर सतत कलम चलना आपकी साहित्यिक सृजनात्मकता का परिचायक है। माँ शारदे की कृपा से आपकी लेखनी नई यात्रा तय कर अपनी निर्धारित मंजिल को अवश्य प्राप्त करेगी।

अ मंदिलवार

मुख्य संचालिका
अनिता मंदिलवार सपना
कलम की सुगंध छंदशाला

शुभकामना संदेश

प्रिय "गीताजंलि" जी,

कलम की सुगंध पर आपकी सशक्त कलम अनेक छंद विधाओं पर निरन्तर नियमित सृजन करती आ रही है। कुण्डलियाँ का शतक सृजन करने जैसी विशेष उपलब्धि और उसके पश्चात आपका यह एकल संग्रह आपकी छंद विधा पर समझ और सतत श्रम का परिचायक है। यह संग्रह **'राम नाम रस भीनी कुण्डलियाँ'** विभिन्न विषयों को समेटे हुए एक अनुपम और अनोखा संग्रह है। पाठक वर्ग इसे पढ़ते हुए अनेक रसों का स्वाद चखकर निश्चय ही आनंद प्राप्त करेगा। यह उपलब्धि आपको भी जीवन भर आनंद की अनुभूति देती रहेगी। और इस प्रकार से आप सैकड़ों संग्रह प्रकाशित करवाकर शुद्ध साहित्यकार के रूप में विशेष स्थान प्राप्त करें। इन्हीं शब्दों के साथ आपको ढेरों बधाई एवं मंगलकामनाएं....!

संजय कौशिक 'विज्ञात'

संस्थापक

कलम की सुगंध

प्रस्तावना

भारतीय संस्कृति, संस्कार साहित्य का सदैव मार्ग प्रशस्त करते रहे हैं। गीतांजलि जो छंद विधा का ज्ञान लेकर उसे आकार देने में संलग्न है निरंतर धर्म ग्रंथों का अध्ययन करती रही, बचपन से ही धर्म ग्रंथों का उद्देश्य जनकल्याण है जानकर, उन्हें अपनी रचना धर्मिता का विषय बनाया तथा कुंडलिया छंद में निबद्ध कर रामायण कथाओं को सर्वसाधारण के लिए ग्राह्य बनाने का एक उपक्रम किया, जिसमें वे पूर्णतया सफल जान पड़ती है।

गीतांजलि भारत पंजाब चंडीगढ़ में पली-बढ़ी इंजीनियरिंग शिक्षित हैं। विवाहोपरांत वर्तमान में अमेरिका में प्रवासी भारतीय है। काव्य लेखन की अभिरुचि ने अतुकांत से तुकांत की ओर रीति-नीति व्याकरण के बंधनों से जुड़ाव होता गया, परिणामतः छंद बद्ध रचनाओं की ओर बढ़ता रुझान, छंद सृजन करते कुंडलिया छंद पर केन्द्रित किया। भावपक्ष मूलतः रामायण व राम चरित मानस के प्रचलित प्रसंगों पर आधारित है। कुंडलिया आधुनिक समसामयिक सृजन धर्मिता में पौराणिकता के साथ आधुनिकता का संधान करती एक नवीन दृष्टिकोण के साथ प्रस्तुत होती हैं। उनकी कुंडलियों में भाव प्रवणता है, नैतिकता है, उदात्ता है, आध्यात्मिकता है, धर्म है। भाव की दृष्टिकोण से जितनी सबल है, भाषा के

दृष्टिकोण से भी तत्सम तद्भव प्रधान शब्दावली के साथ उनकी कुंडलियां उनके भाषा बोध का परिचय देती हैं तथा सरल सहज प्रवाहमयता को साथ बोधगम्य है। यथा-

'आसन मृग की छाल का, उस पर वल्कल चीर।

बैठे करते ध्यान हैं, हरि नदिया तीर।।'

गीतांजलि ने १०८ कुंडलियों का यह लघु संग्रह "राम नाम रस भीनी" नाम अनुरूप राम जन्म से लेकर प्रसंगानुकूल राम चरित मानस के, राम का जन्म, जन्म का आनंद, अयोध्या के चार कुंवर आदि विषयों को साथ लेकर बढती है। वर्तमान युग में पौराणिक आध्यात्मिक धरातल को वाणी देती कवयित्री के आध्यात्मिक अभिरुचि का प्रमाण प्रस्तुत करती है। धर्म-कर्म की परंपरा को प्रवासी मूल में सजीव चेतना का एक उदात्त रूप देती हैं। वर्तमान में इन प्रसंगों के माध्यम से एक धर्म भाव प्रस्तुत करने के साथ जनसाधारण के लिए जनोपयोगी है।

"राम नाम रस भीनी" गीतांजलि की एक सौ आठ कुंडलियों का यह संग्रह हृदय के आध्यात्म भाव की एक सफल भावभीनी शब्दांजलि है, जो समाज में पौराणिक आख्यानों को कुंडलियों के माध्यम से, साहित्य रचना को समृद्ध करती है। यह कुंडलिया निश्चित ही साहित्य जगत के छंद लेखन को आगे बढ़ाने में एक सेतु सिद्ध होगी। कवयित्री गीतांजलि का

साहित्यिक एवं छंद के प्रति मोह भाव उनके लेखन का मार्ग प्रशस्त करता रहे, उनकी कलम अबाध गति से चलते रहे। नए-नए ग्रंथों काव्य सृजन करते, शुभ भाव को प्रशस्त करने हेतु अनेक मंगलकामनाएं।

"राम नाम रस भीनी" की तरह मधुर उपकृत कर्म को नए रंग अंदाज में आगे बढ़ाने में गीतांजलि पूर्णतः सक्षम है, वे निरन्तर रचना धर्मिता में संलग्न रहे। अनेकानेक शुभकामनाओं सहित कोटिशः बधाई।

शुभेच्छु

डॉ मीता अग्रवाल मधुर

रायपुर, छत्तीसगढ़

चलितभाष- 9826540456

रचनाकार की क़लम से

"राम नाम रस भीनी कुण्डलियाँ" को पाठकगण के सम्मुख प्रस्तुत करते हुए मुझे अत्याधिक प्रसन्नता है कि अंततः मेरी प्रथम पुस्तक प्रकाशित होने जा रही है। इस से पूर्व अनेक पत्र पत्रिकायों व संकलनों में अपना योगदान देती रही हूँ, किंतु स्वाधीन रूप से यह ही मेरी प्रथम कृति होगी। काव्य लेखन में मेरी बचपन से ही स्वाभाविक रुचि रही, दस वर्ष की आयु से मैंने नियमित रूप से पहले अंग्रेज़ी और फिर हिंदी की कविता लिखना प्रारम्भ किया। चाहे विज्ञान की छात्रा होने के कारण मुझे हिंदी साहित्य की शैक्षिक दृष्टि से अधिक जानकारी नहीं थी; घर में नियमित रूप से धार्मिक सत्संगों व साहित्यिक गोष्ठियों का वातावरण होने का लाभ मुझे सदैव मिला, और उन्हीं का आधार पा कर मैं इस क्षेत्र में निपुणता प्राप्त करती गई।

'कलम की सुगंध' मंच पर गुरूदेव श्री संजय कौशिक 'विज्ञात' जी के मार्ग दर्शन में कुंडलिया शतकवीर की चुनौती पूर्ण की। उन्हीं कुंडलियों के संकलन को प्रकाशित करने का सुअवसर भी मंच के माध्यम से ही मुझे प्राप्त हुआ है। सभी सह-लेखकों को मेरा हृदय से आभार, व गुरुजनों को बारंबार नमन कि उन्होंने मेरी लेखनी को यह योग्यता प्रदान की। उन्हीं ने मुझे 'विधायनी' का नया उपनाम दे कर कृतज्ञ किया।

इस संग्रह में १०८ कुंडलियों की संक्षिप्त मर्यादा में रहते हुए मैंने राम-कथा की प्रमुख घटनायों को लिखने का प्रयास किया है। राम-कथा का प्रताप कुछ ऐसा है कि लिखने कहने वाले की अयोग्यता को भी अपनी मधुर चाशनी में घोल कर मीठा बना देती है। इन कुंडलियों को रचने में मुझे परम आनंद की अनुभूति हुई, आशा करती हूँ कि पढ़ने वालों को भी यह उतनी ही प्रसन्नता प्रदान करेंगीं।

गीतांजलि

१

गणपति-वंदन

वंदन पहला तव करूँ, गणपति हे गणराज।
प्रथम आशीष दीजिये, हो सब मंगल काज।।
हो सब मंगल काज, हरो विपदा अघ हर्ता।
बाधा रहे न मार्ग, गजानन, हे शुभ-कर्ता।।
तिलक धूप घृत दीप, लगाऊँ चरणन चंदन।
मोदक मेवा भोग, चखाऊँ कर तव वंदन।।

२

महादेव की अर्चना

थाली अर्चन की लिए, आई तेरे द्‌वार।
पाऊँ दर्शन मैं करूँ, तेरी जय जय कार।।
तेरी जय जयकार, रचूँ शब्दों की माला।
बाबा परम दयाल, जटा धर डमरू वाला।।
स्वर सुर का मृदु मेल, बजे लय पर कर ताली।
भक्ति का भरे भाव, सजे सुंदर स्तुति थाली।।

३

माँ शारदे का स्तवन

शुभदा श्वेता शारदा, श्रुति मति स्मृति की मात।
मानस पुत्री ब्रह्म की, विधु-वदनी विख्यात।।
विधु-वदनी विख्यात, वरा विधायनी विदुरा।
तुमी बुद्धि तुम ज्ञान, तुमी सुर स्वर धुन मधुरा।।
धरिए सिर पर हाथ, रचूँ रचना शुचि सुखदा।
सत्य धर्म से युक्त, रहे प्रज्ञा, माँ शुभदा।।

४

श्रीराम व जानकी का स्मरण

सिमरण सीता राम का, करूँ विनय के साथ।
मन मानस में राजिये, जोड़ूँ दोनों हाथ।।
जोड़ूँ दोनों हाथ, तुम्हीं पितु माता मेरे।
सुन्दर शोभित रूप, लखूँ दृग सांझ सवेरे।।
दीजे शुभ वरदान, कहूँ सुकथा सह विवरण।
मंगल यश का गान, करूँ युगपद कर सिमरण।।

५

रामदूत का आराधन

रघुपति प्रिय हनुमान हे, बुद्धि भक्ति आगार।
उद्यम अणु अणु उमगता, उर उत्साह उदार।।
उर उत्साह उदार, बली विक्रम के धारी।
कीर्ति-कमल अभिराम, खिले तोरे दिश चारी।।
दीजे सुसिद्धि अष्ट, तथा निधि नव सह सद्गति।
करिए कृपा कपीस, बसें मन मंदिर रघुपति।।

६

गुरु महाराज को नमन

सतगुरु की महिमा बड़ी, उन बिन मिले न ज्ञान।
भाव न मन जागें भले, होए न भक्ति भान।।
होए न भक्ति भान, नहीं बल जगता तन का।
बिन सुपंथ बिन राह, नहीं द्रुम फलता मन का।।
धरा सिक्त की कोख, बीज डल उपजे गुणतरु।
जिस जन जागे भाग, मिले उस जन को सतगुरु।।

७

मनु-शतरूपा की तपस्या

करते तप अति कठिन थे, मनु शतरूपा संग।
ताप न शीत न जल जिसे कर पाये मिल भंग।।
कर पाये मिल भंग, नहीं वन हिंसक प्राणी।
रहे दोउ मन साध, धरे मन गुरु की वाणी।।
हुए प्रकट हरि अंत, ‘कहो, क्या वर हो वरते?।
बोले ‘सुत हों, आप, यही इक इच्छा करते।।

८

दशरथ का पुत्रेष्टि-यज्ञ

नगरी तट-सरयू बसी, दशरथ जिसके भूप।
पुरी अयोध्या राजते, हों मानो मनु-रूप।।
हों मानों मनु-रूप, प्रजा के नित हितकारी।
पुत्र से किंतु हीन, पत्नियाँ तीनों प्यारी।।
ऋष्यश्रृंग कर यज्ञ, दिये पायस भर गगरी।
गर्भ धरीं सब मात, भई उल्लासित नगरी।।

९

कौशल्या का गर्भ

धारा जब से गर्भ था, कौशल्या थी शांत।
भाते उनके चित्त को, कर्म भले सब भांत।।
कर्म भले सब भांत, परोपकार जन सेवा।
खाती सादा शाक, रुचे मिष्टान्न न मेवा।।
सुनती नित सत्संग, तजा ऐश्वर्य पसारा।
बहती मन दिन रात, भक्ति की भव्या धारा।।

१०

यदा यदा हि धर्मस्य

धरती पर जब जब चढ़े, परम पाप का पूर।
तब तब लेकर जन्म हरि, करें दुष्टता दूर।।
करें दुष्टता दूर, धुरी सुधर्म की धारें।
भक्तों का उद्धार, करें विनती स्वीकारें।।
युग युग में बहु भाँत, विभा दैवी अवतरती।
हर अधर्म का ताप, करे शीतल शुचि धरती।।

११

श्रीराम जन्म

नवमी तिथि शुभ चैत्र की, सुंदर सब संसार।
सरयू तट कोसल पुरी, दश दिश शुभ संचार।।
दश दिश शुभ संचार, सुखी जल थल सब प्राणी।
जन जन के मन मोद, धरा नभ ऋतु मनभानी।।
ऐसे पावन काल, मही छवि हरि की जन्मी।
उपपद राम लगाय, हुई धन्या तिथि नवमी।।

१२

पुत्र-जन्म पर दशरथ का उल्लास

दशरथ मन भरपूर है, उठती हर्ष हिलोर।
नन्हा सा बालक सखी, लिया चित्त को चोर।।
लिया चित्त को चोर, बिना प्रयास कुछ कीना।
फीका सब संगीत, रुदन भी तिस रसभीना।।
आ कोसल्या द्वार, हुये निहाल छवि लख लख।
रवि सुत नभ गृह देख, खिला उर अम्बुज दशरथ।।

१३

बालरूप श्रीराम

नटखट बालक चार हैं, आँगन दशरथ भूप।
करते निस दिन खेल हैं, ब्रह्म कुँवर धर रूप।।
ब्रह्म कुँवर धर रूप, लुभाते पितु अरु माता।
कोउ न जाने सार, कहें जो तुतली वार्ता।।
डगमग चलते चाल, धरा पर गिरते लटपट।
भरत लखन रिपु राम, करें लीला जग नटखट।।

१४

वसिष्ठ आश्रम में अयोध्या-कुमार

भाई चारों थे गए, गुरु वसिष्ठ के पास।
नैतिक वैदिक पाठ की, लेकर मन में प्यास।।
लेकर मन में प्यास, गए थे चारु कुमारा।
पहिरे वल्कल वस्त्र, जटा उपवित था धारा।।
सीखे सारे शास्त्र, शस्त्र विद्या भी पाई।
भरत शत्रुघ्न राम, संग लक्ष्मण प्रिय भाई।।

१५

वयस्क हुए कुमार

आए हैं घर लौट के, चारों राज कुमार।
बीता उनका बालपन, बही समय की धार।।
बही समय की धार, हुए हैं सब धनुधारी।
पितु के सदा सहाय, प्रजा के नित हितकारी।।
परम परस्पर प्रेम, नहीं पल ईर्ष्या छाए।
मातृ-चित्त के चंद्र, चढ़े पूनम नभ आए।।

१६

विश्वामित्र का आश्रम

आश्रम घन वन में छुपा, करते ऋषि थे शोध।
विश्वामित्र प्रकाण्ड मति, शस्त्र दिव्य बहु बोध।।
शस्त्र दिव्य बहु बोध, विधा वैदिक से नाना।
दानव दल प्रतिरोध, गुणी ने था मन ठाना।।
सह ताड़का सुबाहु, और मारीच नराधम।
करते यज्ञ विनष्ट, जला कर पुनि पुनि आश्रम।।

१७
ऋषि का राम लक्ष्मण को माँगना

जाकर दशरथ की सभा, बोले विश्वामित्र।
राजन, तुमसे माँगता, रामचंद्र सौमित्र।।
रामचंद्र सौमित्र, बुला भेजो सुत शूरे।
चलें सघन वन संग, कर्म पालन हों पूरे।।
पितु का पा आदेश, गये बन मुनि के चाकर।
ताड़क और सुबाहु, हते आश्रम में जाकर।।

१८
अहल्या उद्धार

रघुपति लक्ष्मण संग ले, दानव दल को मार।
जाते थे मिथिला पुरी, गुरु आज्ञा स्वीकार।।
गुरु आज्ञा स्वीकार, शस्त्र दैवी कर धारी।
देखी शिला स्वरूप, पड़ी पथ में ऋषि नारी।।
सती अहल्या नाम, ठगी थी जो छल सुरपति।
छू कर पावन पाँव, किया उद्धार तिस रघुपति।।

१९

पुष्प-वाटिका में राम-लक्ष्मण

उपवन मिथिला का हरा, फूलों से भरपूर।
कलियाँ कोमल अनछुई, ढूँढ रहे दो शूर।।
ढूंढ रहे दो शूर, गौर श्यामल शुचि तनमन।
चौड़े वक्ष बलिष्ठ, छटा तेजस्वी कणकण।।
कमल सरीखे नैन, मनोहारी मृदु चितवन।
गुरु हित चुनते फूल, प्रात पावन पा उपवन।।

२०

पुष्पवाटिका में पायल की धुन

पायल रुनझुन बज रही, माँ सीता के पाँव।
पुष्प वाटिका में, सखी, अमलतास की छांव।।
अमलतास की छांव, कहें रघुवर, सुन लक्ष्मण।
लय सुमधुर में झूम, रहा यह सारा उपवन।।
कामदेव का तीर, गया कर हिय को घायल।
बजती रह रह कान, कहो किस की है पायल।।

२१

सिया की स्नेहिल सखियाँ

सखियाँ बोलें, भो सिया, वंदो गौरी मात।
जब से देखा राम को, पुलकित हैं तव गात।।
पुलकित हैं तव गात, खिली है स्मित तव मुख पर।
मांगो मन का मीत, भवानी से तुम हठ कर।।
सुनकर सुखकर सीख, झुकी लज्जा भर अखियाँ।
कैसे सारे भेद, जान जातीं हैं सखियाँ।।

२२

सीता द्वारा स्तुति-सिंहावलोकिनी अलंकार

पूजा गौरी मात की, करती सिय दृग मूँद।
मूँद नयन कर जोड़ दो, बूँद अश्रु, जल बूँद।।
बूँद अश्रु, जल बूँद, बहे पद माँ के पावन।
पावन कहती भाव, बसे माँ, दृग मम साजन।।
साजन की इक आस, नहीं मन वर माँ, दूजा।
दूजा धनु न उठाय, कहे सिय कर माँ, पूजा।।

२३

सीता स्वयम्वर

सुंदर मंडप है सजा, सिया स्वयम्वर आज।
दूर निकट के भूप आ, आसन रहे विराज।।
आसन रहे विराज, संग ऋषिवर रघुवीरा।
लेते लख आनंद, करें प्रयास नृप, धीरा।।
सिय पितु हुये निराश, सका न धनु कोउ वश कर।
किसके देऊँ हाथ, सुता सुशील शुचि सुंदर।।

२४

राम द्वारा धनु-भंग

राघव तज आसन उठे, सुनकर जनक विलाप।
ध्यान किया मन शम्भु का, लिया उठा शिव चाप।।
लिया उठा शिव चाप, हुई नृप-सभा अचम्भित।
गूँजा चहुँ दिश नाद, गिरा भू धनु हो खंडित।।
गया जनक अवसाद, नृपों का भया पराभव।
लेकर सिय वरमाल, चली वरने वर राघव।।

२५

परशुराम का आगमन

धरती पर्वत थे हिले, सुन कर धनु टंकार।
परशुराम शिव शिष्य का, लहका क्रोध विकार।।
लहका क्रोध विकार, गए तुरंत वे मिथिला।
किया जब ऋषि प्रवेश, सभा देखी सब शिथिला।।
किसने तोडा चाप, अवज्ञा डमरू-धर की।
आ समक्ष ले दण्ड, हिली जिस कारण धरती।।

२६

लक्ष्मण का प्रतिकार

सुनकर लक्ष्मण थे उठे, कहे, हे परशुराम।
धनुष पुराना टूटते, मचा क्यूँ कोहराम।।
मचा क्यूँ कोहराम, बिना कारण क्यूँ क्रोधा।
धनुष कई बहु भाँत, तोड़ फेंकें नित योद्‌धा।।
ऋषि का धनु कर धारि, चढ़ा शर बोले रघुवर।
जाओ अब घर लौट, गये मुनि आज्ञा सुनकर।।

२७

राम-विवाह

न्यौता राम विवाह का, सुता सिया के संग।
भेजा दशरथ को जनक, भए प्रफुल्लित अंग।।
भए प्रफुल्लित अंग, पिता दशरथ सह नारी।
भरत शत्रुघ्न साथ, चले बाराती भारी।।
बैठे वेदी राम, बने वसिष्ठ थे होता।
सीता राम विवाह, सभी जगती को न्यौता।।

२८

अन्य कुमारों का विवाह

बोले वसिष्ठ हे जनक, हैं तेरे घर भूप।
कन्या रत्न त्रि और भी, शीलवती शुभ रूप।।
शीलवती शुभ रूप, सुता कुशध्वज व तेरी।
कीजे सबका दान, नहीं हो कुछ अब देरी।।
श्रुति हो रिपुघ्न संग, उर्मि लक्ष्मण की होले।
थाम मांडवी हाथ, भरत परिणय प्रण बोले।।

२९

दशरथ का मनोरथ

रहते थे सब हो सुखी, भाई चारों साथ।
माता मंगल मानतीं, सिर पर पितु का हाथ।।
सिर पर पितु का हाथ, किया तब भूप विचारा।
बोले हो नृप राम, प्रजा को भी वह प्यारा।।
दशरथ मन की बात, सभा में जा जब कहते।
थे हर्षित सब लोग, पुरी कोसल जो रहते।।

३०

कैकेयी के वचन

दशरथ अति उल्लास में, कहते शुभ संवाद।
कैकेयी आवास में, गए मान आह्लाद।।
गए मान आह्लाद, नहीं था कदापि जाना।
विषम सौतिया डाह, तभी रानी ने ठाना।।
सिमर वचन दो पूर्व, दिया राघव को वनपथ।
राज्य भरत के भाग, फँसे वचनों में दशरथ।।

३१

कौशल्या-कैकयी संवाद

कहती रानी हो दुखी, छोटी तुझको जान।
स्नेह सरल दिया सदा, सादर सह सम्मान।।
सादर सह सम्मान, नहीं कुछ अंतर ठाना।
अनुजा का दे स्थान, नहीं सौतन था माना।।
पति को तुझ से बाँट, रही बरसों मैं सहती।
क्यूँ, कैकेयी, घात, किया, कौशल्या कहती।।

३२

राम लक्ष्मण सीता का वनवास-प्रण

राघव धीरज थे धरे, सुन वचनों की बात।
शांत चित्त गृह को गये, पूज मंझली मात।।
पूज मंझली मात, सिया को बोले हँसकर।
दिया पिता वनवास, पुराने प्रण में फँसकर।।
बोली सिया तुरंत, चलूँ मैं संग पिया तव।
लक्ष्मण भी हठ ठान, चला वन पथ सह राघव।।

३३

राम की वनवास से पूर्व प्रार्थना

विनती कर जोड़े करूँ, हे हरि मंगल मूल।
मानस मम से झड़ गिरे, राजमहल की धूल।।
राजमहल की धूल, धुले पा वन शुचि पावन।
नगर ग्राम से दूर, बसूँ पा मन रुचि भावन।।
न ऐश्वर्य का पूर, नहीं धन जन की गिनती।
ऐसा जीवन, देव, वरूँ मैं करके विनती।।

३४

राम का लक्ष्मण को उपदेश

अंकुश निज पर राखिये, करिए कुटिल न काम।
सरल सुनियमित हो दिवस, कहें अनुज से राम।।
कहें अनुज से राम, यही मन का अनुशासन।
हो इसके आधीन, रहेंगे वन हम लक्ष्मण।।
ब्रह्मचर्य व्रत पाल, बिछाकर भू पर तृण कुश।
संयम चौदह वर्ष, धरें रख निज पर अंकुश।।

३५

वसिष्ठ का राम को उपदेश

अमृता आत्मिक आंकता, अनवरत अंधकार।
अपर्याप्त पा कर करे, अम्बर पर अधिकार।।
अम्बर पर अधिकार, अक्ष गवाक्ष अंदर आ।
अकस्मात आघात, करे असत्य अंतर पा।।
आशुतोष अखिलेश, हरें अधमा अनु अनृता।
अविरल उनको अर्च, मिले अनघा अलि अमृता।।

३६

सिया को जनक की स्मृति

बाबुल बोले थे मुझे, जा बिटिया उस देश।
पीछे मुड़ मत देखना, करना मोह न लेश।।
करना मोह न लेश, सदा सेवा मन धरना।
आलस निद्रा त्याग, कभी विलास मत वरना।।
पाल जनक की सीख, नहीं होता मन आकुल।
चली कठिन हूँ राह, हृदय में रख मैं बाबुल।।

३७

उर्मिला-सिया संवाद

बहना, बोली उर्मिला, अखियन आँसू पूर।
संग पिया वन वास को, जाती हो तुम दूर।।
जाती हो तुम दूर, कठिन व्रत, भगिनी, चुनकर।
रहना पति के साथ, सुधा सम वार्ता सुनकर।।
चौदह वर्ष वियोग, सिया, है मुझको सहना।
रही शरण तव सौंप, धरोहर निज मैं, बहना।।

३८

अयोध्या-वासियों का हठ

तजकर जब पुर को चले, राम लखन सिय संग।
रोते थे माता पिता, हिय सब शोक तरंग।।
हिय सब शोक तरंग, प्रजा कहती मत जाना।
रुको सुमंत्र, पुकार, चले जन रथ सह नाना।।
निश करने विश्राम, रुके जब संध्या भजकर।
सोते उनको जान, गए रघुवर तिन तजकर।।

३९

केवट-प्रसंग

गंगा के शुचि तीर थे, पहुँचे राघव प्रात।
बोले केवट को बुला, जाना उस तट, भ्रात।।
जाना उस तट, भ्रात, बिठाओ अपनी नौका।
बोला, तव पद धूल, कहीं न दे मुझे चौंका।।
शिला समा मम नाव, नहीं पावे स्त्री-अंगा।
प्रथम पखारूँ पाँव, तभी तर सकते गंगा।।

४०

वनवास की प्रथम रात्रि

शीतल किरणें चंद्र की, उतरें गंगा तीर।
मिल कर लहरों संग, हरतीं मन की पीर।।
हरतीं मन की पीर, कहें प्रभु, सुन हे लक्ष्मण।
पहली रजनी भ्रात, बिताते हम हैं घन वन।।
आता रह रह याद, पिता के नैनों का जल।
रोती होगी मात, भये कैसे मन शीतल।।

४१

राम की वन में ऋषियों से वार्ता

आसन मृग की छाल का, उस पर वल्कल चीर।
बैठे करते ध्यान हैं, हरि नदिया के तीर।।
हरि नदिया के तीर, कुटी में सुख से रहते।
ऋषि मुनि के शुचि संग, कथा कौशल की कहते।।
कैसे बिगड़ी मात, दिया कैसे निष्कासन।
करते वार्ता शांत, तले द्रुम बैठे आसन।।

४२

दशरथ का संताप

लौटे जभी सुमंत्र थे, पहुँचा वन में राम।
मिला न दशरथ चित्त को, इक लव भी विश्राम।।
इक लव भी विश्राम, नहीं निद्रा इक क्षण थी।
दोष रहित दो पुत्र, गई सीता भी वन थी।।
नाना के घर वास, करें सुत दोनों छोटे।
किस का पकड़ूँ हाथ, नहीं गृह कोई लौटे।।

४३

दशरथ का निधन

रानी बैठी पास थी, कैकेयी जिस नाम।
प्रिय जो कल तक थी परम, लगे आज वह वाम।।
लगे आज वह वाम, चुभे छवि तिस नृप नैना।
करके कटुतम काम, सभी का छीना चैना।।
जा कौशल्या धाम, बहा दृग तपता पानी।
त्यागे थे तिन प्राण, भई अनाथ सब रानी।।

४४

भरत का विलाप

पाकर पत्र वसिष्ठ का, लौटे भरत कुमार।
भ्रात शत्रुघ्न साथ ले, धीरज मन में धार।।
धीरज मन में धार, सुना फिर पितु का मरना।
राम लखन वनवास, सिया का भी प्रण धरना।।
कैकेयी की चाल, तजी, तत्क्षण वन जाकर।
रोए भरत पुकार, कुटी में रघुपति पाकर।।

४५

राम-भरत मिलाप

बोले मिलकर राम को, चलिए भैया लौट।
तुम बिन नगरी शून्य है, बिन समीर ज्यूँ घोट।।
बिन समीर ज्यूँ घोट, सभा सिंहासन सूना।
पिता-निधन का शोक, हुआ है तुम बिन दूना।।
सकूँ न पितु-प्रण भंग, सुनो भाई मम भोले।
रख कर मन में धीर, भरत से रघुवर बोले।।

४६

राम का भरत को उपदेश

अविरल जीवन जल बहे, सके न कोई रोक।
पत्थर पादप पथ पड़े, सकें न धारा टोक।।
सकें न धारा टोक, बहे जो क्षण क्षण कलकल।
मनुज भ्रमित हो चित्त, चले सह उसके प्रतिपल।।
विरला कोई साधु, सधा जिसका मन अविचल।
बैठ समय के तीर, लखे बहाव को अविरल।।

४७

चित्रकूट में उर्मिला-लक्ष्मण संवाद

सजना तेरे नाम की, चूड़ी करती शोर।
करती तुझको याद है, नित संध्या निश भोर।।
नित संध्या निश भोर, खनक खनक यह निरंतर।
ढूँढे मन का मीत, बसा जो हिय के अंतर।।
थाम हाथ में हाथ, कभी न मुझे तुम तजना।
आवोगे जब लौट, प्राणपति मोरे सजना।।

४८

लक्ष्मण के प्रेम की डोरी

डोरी बांधी प्रीत की, सजनी तोरे संग।
कितना भी हम दूर हों, कभी न होवे भंग।।
कभी न होवे भंग, रहे दृढ़ बंधन अपना।
अवध तू मैं अरण्य, भाग दोनों के तपना।।
निस दिन ध्याना ईश, मनाना मंगल मोरी।
दें वर हमको देव, रहे अटूट यह डोरी।।

४९

भरत का नंदी-ग्राम वास

रखकर हिय छवि राम की, धर कर पादुक सीस।
लौटे नगरी को भरत, ले मन विरहा टीस।।
ले मन विरहा टीस, बिठा कर पादुक आसन।
कुटिया नंदी ग्राम, बना करते पुर शासन।।
मान आदर्श राम, कर्तव्य करते हितकर।
मातृ मातृभू सेव, प्रजा हित मन में रखकर।।

५०

भरत द्वारा भाइयों की मंगल-कामना

चमका नभ में चंद्र है, अर्घ दे रहे देख।
करते अर्चन भरत हैं, कटे कष्ट की रेख।।
कटे कष्ट की रेख, सुखी हों वन में भैया।
रहे निरोगी देह, संग नित सीता मैया।।
लक्ष्मण का शुचि भाल, रहे सत बल से दमका।
माँग रहे कर जोड़, रहे पथ ग्रह शुभ चमका।।

५१
राम-लक्ष्मण सम्वाद

मानव जन्म अनूप है, इस सम अन्य न और।
सुना सोपान स्वर्ग का, दिव्य मोक्ष की ठौर।।
दिव्य मोक्ष की ठौर, व्यर्थ न कीजिये अवसर।
सुर भी चाहें जन्म, मिले मनुष्य तन वरतर।।
कर नित परोपकार, तपो तप, कहते राघव।
सेवा सुमिरण त्याग, वरो पाकर तन मानव।।

५२
सिया-राम का संध्या-वंदन

निर्मल नद गोदावरी, सतत बहे अविराम।
बैठे तट पर ध्यान में, संग सिया श्रीराम।।
संग सिया श्रीराम, करें संध्या अंतर्मन।
असुर न आवे पास, खड़े पहरे पर लक्ष्मण।।
ऋषि मुनि के साथ, बहे सुकर्म जल अविरल।
शुचि दिन शुभ हर रात, करें मन तन को निर्मल।।

५३
सीता की गागर-सिंहावलोकिनी अलंकार

गागर सिर धारे चली, सीता शीतल छाँव।
छाँव सुखमयी भोर की, गाँव इधर उत गाँव।।
गाँव इधर उत गाँव, नदी के दोनों तीरे।
तीरे चलती नार, क्षितिज रवि उगता धीरे।।
धीरे धरती पाँव, मिले जा नदिया सागर।
सागर-शोभा नाथ, लखे धर कर कुटि गागर।।

५४
माँ सीता का गजरा

गजरा पंकज नील का, गूंथ रहे श्री राम।
पीपल की छैय्या तले, बीच वनी सुखधाम।।
बीच वनी सुखधाम, जहाँ बहती जल धारा।
सरि शीतल के तीर, बहे अनिल शुद्ध न्यारा।।
जाकर भीतर द्वार, कहें वाणी मृदु मधुरा।
बैठ तनिक मुझ पास, सिये पहना दूँ गजरा।।

५५

राम द्वारा सीता की प्रशंसा

मीठी तेरी वाक है, कहें सिया से राम।
पल पल छिन छिन संग तू, देती सुख विश्राम।।
देती सुख विश्राम, प्रिया, नित सेवा तेरी।
धारे मन उत्साह, सदा तू सहाई मेरी।।
कंद खिलाती मूल, भून जो तुम अंगीठी।
सीते, तेरे हाथ, रसोई लगती मीठी।।

५६

राम-सीता संवाद

पीहर का आता कभी, सीते तुम्हें विचार।
बीहड़ वन में हो दुखी, सिमरो क्या पितु प्यार।।
सिमरो क्या पितु प्यार, चुभें जब मग में कांटे।
बोली सिय धर धीर, पते, सुख दुख हैं बांटे।।
मन मेरे संदेह, नहीं प्रभु मेरे पलभर।
तेरा जब है साथ, स्मरूँ क्यों मैं निज पीहर?

५७

सीता की वन-यात्रा

यात्रा दक्षिण देश की, यद्यपि गृह से दूर।
मन मेरे को मोहते, वन सर नग भरपूर।।
वन सर नग भरपूर, वनी जन सभ्य सुसंस्कृत।
प्रबल प्रकृति का पूर, छटा चहुँ दिशा अलंकृत।।
सतत पिया का संग, विपुल है सुख की मात्रा।
सुंदर सरल सकार्थ, रही अब तक यह यात्रा।।

५८

एकाकी पहरा देते लक्ष्मण

बातें करते आप से, जग कर सारी रात।
भाई भाभी सो रहे, करे न कोई घात।।
करे न कोई घात, खड़े पहरे पर लक्ष्मण।
बनी हृदय की मीत, प्रकृति जड़ चेतन कण कण।।
तकते धरती व्योम, बिता देते हैं रातें।
कभी द्रुम से कभी पात, कहें निज मन की बातें।।

५९
वन में माँ की स्मृति

सुमधुर स्मृति ममता भरी, आकर मन के द्वार।
सहला जातीं है मुझे, दे कर माँ का प्यार।।
दे कर माँ का प्यार, भरे नव बल मम तन में।
करे उजागर राह, घने तम दण्डक वन में।।
कहते लक्ष्मण, रात, बरस चौदह धृति रखकर।
करे प्रतीक्षा मात, धरे स्मृति मम मन सुमधुर।।

६०
वन-जन त्राता राम

बदला वन का वेश है, जब से आये राम।
संकट असुरों का टला, किया वीर शुभ काम।।
किया वीर शुभ काम, हने जो दानव गिन गिन।
भाई लक्ष्मण संग, चले सुधर्म मग दिन दिन।।
हुए उपद्रव शांत, हुआ स्वच्छ जल गंदला।
जय जय जय श्री राम, वनी जन जीवन बदला।।

६१
शूर्पणखा का राम को देखना

आभा सूरज की जभी, तन उन के टकराय।
बिखरे ज्यूँ प्रभ चंद्र की, मन मेरे को भाय।।
मन मेरे को भाय, छटा सुंदर रघुबर की।
लख लख तापस रूप, करूँ इच्छा धनुधर की।।
असुर संग को भूल, उन्हीं पर मन है साधा।
शूर्पणखा के नैन, बसी है राघव आभा।।

६२
शूर्पणखा का प्रणय-प्रस्ताव

बोली हँस कर दानवी, हे वनवासी वीर।
छवि तव मोहे भा गयी, हृदय न पाता धीर।।
हृदय न पाता धीर, करो मत अब तुम देरी।
दक्षिण दिश में द्वीप, वहाँ लंका है मेरी।।
सोने का है कोट, पुरी अपूर्व अनमोली।
चलो वहीं मुझ संग, शठा शूर्पनखा बोली।।

६३
शूर्पणखा का अंग-भंग

बोले राघव सुंदरी, भार्या मेरे साथ।
इक पत्नी व्रत पालता, पकड़ूँ न अन्य हाथ।।
पकड़ूँ न अन्य हाथ, सुनी जब ऐसी वाणी।
सीता को कर लक्ष्य, शठा ने वध की ठानी।।
भाव ताव तिस देख, लखन ने शर निज तोले।
काटे नाक व कान, सिया राघव जय बोले।।

६४
खर-दूषण युद्ध-पूर्व सीता की विजय-कामना

विजयी हो कर लौटना, बोली सीता मात।
हरना निज शर से सभी, करते खल जो घात।।
करते खल जो घात, वनी ऋषि मुनि सद्जन की।
शांति करें जो भंग, सघन ससुमन इस वन की।।
खर दूषण दो भ्रात, शूर्पणखा के दिग्जयी।
बल से उनको मार, पते, तुम होना विजयी।।

६५

सीता द्वारा राम का उत्साह-वर्धन

खोना मत निज धैर्य को, अरिदल देख विशाल।
शौर्य चित्त धरना पते, लड़ना रण विकराल।।
लड़ना रण विकराल, मरें सब असुर अधर्मी।
कहे सिया, हे राम, बचे न कोई कुकर्मी।।
दानव-दल से मुक्त, दिखे वन का हर कोना।
यही कर्तव्य, वीर, नहीं साहस तुम खोना।।

६६

शूर्पणखा का लंका जाना

दूषण खर जब थे मरे, राघव से कर युद्ध।
शूर्पणखा लंका गई, हो मन में अति क्रुद्ध।।
हो मन में अति क्रुद्ध, कही, सुन भैया रावण।
भय न रहा उस देश, मरे हैं सब योद्धा-गण।।
करते हैं अब वास, वनों में रघुकुल भूषण।
मारे असुर अनेक, हने उन ही खर दूषण।।

६७

मारीच का छल

सुनकर बातें बहिन की, रावण उठा दहाड़।
क्यूँ कोई दानव उन्हें, सका न अब तक ताड़।।
सका न अब तक ताड़, गए सेना दल ढहते।
क्यूँ न मुझे था ज्ञान, रहे क्यूँ उनको सहते।।
तभी मारीच पास, गया प्रण छल का बुनकर।
वेश स्वर्ण मृग धार, चला वह आज्ञा सुनकर।।

६८

राम की स्वर्ण-मृग लीला

भैया, सुनिए दूर से, बुला रहे श्री राम।
हा लक्ष्मण, हा, हा सिया, बोल रहे अविराम।।
बोल रहे अविराम, विकट वन विपदा छाई।
करना अब न विलम्ब, वेग से जाना, भाई।।
कैसे जाऊँ छोड़, अकेली तुमको, मैया।
है मुझको विश्वास, सर्व सक्षम मम भैया।।

६९
सीता की चिंता

चिंतन करती मन सिया, मलिन अयन का ओज।
लौटें पति देवर कुशल, गए जो मृग की खोज।।
गए जो मृग की खोज, बली हठ मेरा सुनकर।
काँधे धनु को धार, उठा शर तीखे चुनकर।।
असुरों से है वैर, लिया कौशल्या नंदन।
हे हरि, रखना लाज,करे सिय मन में चिंतन।।

७०
सीता-हरण

बिखरी साड़ी रेशमी, बिखरे सिर के केश।
लपक उठाया दुष्ट ने, धर कर मुनि का वेश।।
धर कर मुनि का वेश, खड़ा था रेखा पीछे।
सीता देती दान, किये दृग दो निज नीचे।।
रुक न सका वह दुष्ट, देख छवि सिय की निखरी।
झपटा जैसे व्याल, धरा गिर भिक्षा बिखरी।।

७१
जटायु का शौर्य

साहस खग करके बड़ा, शौर्य चित्त में धार।
टूटा पापी नीच पर, हरता जो हरि नार।।
हरता जो हरि नार, बुला हठ से गृह बाहर।
भेज दूर दो भ्रात, छली मृग स्वर्ण दिखा कर।।
दुष्कृत होता देख, लड़ा जटायु तज आलस।
रावण का रथ रोक, डटा पथ में कर साहस।।

७२
जटायु का संदेश

कटकर जटायु था गिरा, रावण की तलवार।
पंख कटे कैसे उड़े, तड़पा हो लाचार।।
तड़पा हो लाचार, तके रघुबर का रस्ता।
कह सब प्रभु को बात, गया जग तज वह हँसता।।
लखन संग श्रीराम, चिता पर खग तन रखकर।
पंचवटी को छोड़, चले निज गृह से कटकर।।

७३

राम द्वारा सीता की खोज

करते सिय की खोज फिर, भटके वन वन राम।
इस उस सबसे पूछते, पाते पल न विराम।।
पाते पल न विराम, कहाँ होगी स्मर सीता।
अहनिश आठों याम, हृदय का आँगन रीता।।
निर्भय जो थे वीर, सोच अनहोनी डरते।
दक्षिण दिश की ओर, सतत वे यात्रा करते।।

७४

शबरी के बेर

शबरी भोली भीलनी, मुनि मतंग सुन बात।
भावुक भावों भर भजे, भव भय भंजन भ्रात।।
भव भय भंजन भ्रात, राम लक्ष्मण धनुधारी।
श्यामल गौर शरीर, दुखी जन के अघहारी।।
चुनचुन लाती बेर, पके फल पीले गठरी।
भोग लगाते राम, चखा जिन पहले शबरी।।

७५

हनुमान-राम मिलाप

पाकर प्रभु संकेत कुछ, जटायु शबरी पास।
पहुँचे दक्षिण भू जहाँ, वानर जन का वास।।
वानर जन का वास, धरा पठार पथरीली।
पर्वत थे चहुँ ओर, प्रकृति भी कठिन कँटीली।।
मिले वहाँ हनुमान, वेश ब्राह्मण में आकर।
धन्य हुए तब राम, सखा सुग्रीव सा पाकर।।

७६

राम-सुग्रीव संवाद

नारी का अपमान हो, सह न सकूँ मैं देख।
रूमा बाली ने हरी, तज मर्यादा रेख।।
तज मर्यादा रेख, सुता सम भाई-भार्या।
रखी घर में बलात, सती पत्नी तव आर्या।।
कहें राम, सुग्रीव, हुआ अधर्म है भारी।
किष्किंधा का भूप, गया ले पर की नारी।।

७७

बालि-सुग्रीव युद्ध

आधा बल सुग्रीव का, लिया जब बालि खींच।
नहीं अनुज कुछ कर सका, लौटा लथपथ कीच।।
लौटा लथपथ कीच, लिए तन घाव अनेका।
कैसी तोरी प्रीत, कहे प्रभु से अविवेका।।
बोले राघव मीत, रही दृग पथ में बाधा।
कैसे सधता तीर, हृदय जब निश्चय आधा।।

७८

बाली-वध

हारा फिर सुग्रीव था, बाली से बलवीर।
आगे अग्रज के हुआ, आकुल अनुज अधीर।।
आकुल अनुज अधीर, करें प्रभु पूरा कब प्रण।
देख रहे रघुवीर, छिपे द्रुम दल सह लक्ष्मण।।
साध लक्ष्य पर तीर, बली बाली को मारा।
हुई धर्म की जीत, अंत अधर्म था हारा।।

७९

सुग्रीव का राज्याभिषेक

नगरी सीमा लाँघना, है प्रण के विपरीत।
कहें राम सुग्रीव से, आ न सकूँ मैं मीत।।
आ न सकूँ मैं मीत, बनो जा तुम अब राजा।
आना मेरे पास, पूर्ण कर पुर के काजा।।
जब तक वर्षा काल, रुकी हैं राहें सगरी।
रहूँ मैं ऋष्यमूक, निकट किष्किन्धा नगरी।।

८०

ऋष्यमूक पर सावन

आया सावन मास है, सब दिश जल का पात।
ऋष्यमूक घन से घिरा, पम्पा सर भी, तात।।
पम्पा सर भी तात, बहे बहु जल की धारा।
किरण भानु की मंद, हुआ दिवस अंधियारा।।
थर थर काम्पें गात, वनों में कुहरा छाया।
मिलने हम को भ्रात, नहीं वानर पति आया।।

८१
राम की सुग्रीव को चेतावनी

कहना अनुज सुग्रीव से, करे न कृतघ्न काज।
मैंने पाला निज वचन, बारी तेरी आज।।
बारी तेरी आज, हुआ समाप्त अब सावन।
ढूंढो भिजवा दूत, कहाँ रक्खी सिय रावण।।
मास गए दो बीत, नहीं विलम्ब अब सहना।
और नहीं हो देर, करो पूरा निज कहना।।

८२
राम का हनुमान को मुद्रिका देना

हनुमत मुख है दमकता, जैसे दिनकर लाल।
ओज तेज भरपूर तन, तिलक लगा शुभ भाल।।
तिलक लगा शुभ भाल, तनी बजरंगी काया।
बल बुद्धि का सुमेल, राम के मन को भाया।।
दी मुद्रिका निकाल, जान कपीस को सुतवत।
देना मम संदेश, मिले जब सिय, हे हनुमत।।

८३

सीता की खोज में कपि-समूह

पूरा बिन कारज करे, जा न सकें निज धाम।
खोज रहे हरि नार को, निस दिन आठों याम।।
निस दिन आठों याम, रहा जा निश्चित काला।
वन उपवन पुर ग्राम, नहर नद नदिया नाला।।
कहीं न सीता मात, हुये हताश कपि शूरा।
पहुँचे सागर तीर, परख प्रदेश पट पूरा।।

८४

जाम्बवंत की प्रेरणा

जाना कपि तुम सिंधु तर, लंका नगरी द्वीप।
राक्षस हैं बसते जहाँ, रावण जहाँ महीप।।
रावण जहाँ महीप, बली बहु मिथ्या-चारी।
ढूँढो जा उस स्थान, सती सिय मात हमारी।।
जाम्बवंत वर वृद्ध, कहें सुन प्रिय हनुमाना।
ले कर प्रभु का नाम, कर्म सब करते जाना।।

८५

हनुमान का सागर लाँघना

सागर गहरा बीच में, उस तट लंका देश।
रावण करता वास है, नगरी स्वर्ण विशेष।।
नगरी स्वर्ण विशेष, लखूँ मैं जा उस पारा।
लिया सिया को ढूँढ, यहाँ तो सब दिक चारा।।
मिले कदाचित द्वीप, छिपी रहस्य-मय आगर।
हो जिस विध प्रभु काज, तरा कपि भुजबल सागर।।

८६

हनुमान का लंका में प्रवेश

लंका पुर को रक्षती, खड़ी लंकिनी द्वार।
मुठिका इक खा कर गिरी, बही रक्त मुख धार।।
बही रक्त मुख धार, वचन विधि का हिय आना।
सादर करी प्रणाम, जभी कपि को पहचाना।।
क्षण भर का सत्संग, मिला, छूटी सब शंका।।
कपि ने धर लघु रूप, किया प्रवेश पुर लंका।

८७

लंका के वासी विभीषण

कोना विभिन्न एक था, दुर्ग द्वीप के बीच।
बहती गंगा पुण्य की, नहीं पाप की कीच।।
नहीं पाप की कीच, सुने शुभ हरि का कीर्तन।
लंका में कर वास, भजें नित 'राम' विभीषण।।
भोर किरण के संग, जपें प्रभु नाम सलोना।
कपि मन छाया मोद, देख वह पावन कोना।।

८८

अशोक-वाटिका में हनुमान

पाकर सीता का पता, भक्त विभीषण पास।
पहुँचे अशोक वाटिका, कपि भर उर उल्लास।।
कपि भर उर उल्लास, चढ़े उस द्रुम की डाली।
जिस तल सिय का वास, असुरियाँ पहरे वाली।।
नित नित निकृष्ट बात, कहे शठ रावण आकर।
बैठे कपि चढ़ पेड़, उसी उपवन को पाकर।।

८९

अशोक वाटिका में सीता का विलाप

गीला आँचल भोर का, पोंछ निशा के नैन।
वन अशोक रोती सिया, सगरी काली रैन।।
सगरी काली रैन, तड़पती कहती क्षण क्षण।
कब आयोगे राम, प्रतीक्षारत मम कण कण।।
जब जब संध्या काल, गगन तव तन सम नीला।
तक तक भरती आँख, पिया, मन होता गीला।।

९०

त्रिजटा-सीता संवाद

गलती इक क्षण की बड़ी, दीर्घ दे गई दाह।
भेजा हठ कर राम को, स्वर्ण हिरण की चाह।।
स्वर्ण हिरण की चाह, सुना न कहा जो भाई।
रहा मुझे जो रक्ष, उसे भी भेजा माई।।
चतुर आसुरी चाल, रही पग पग मति छलती।
त्रिजटा से कह बात, सिया पछताती गलती।।

९१
सीता का पंछी को सन्देश

उड़ना पंछी भोर के, जाना वनी कुटीर।
रहते मेरे राम हैं, जहाँ नदी के तीर।।
जहाँ नदी के तीर, करें ऋषियों की सेवा।
उठ कर पहले प्रात, मनाएं निज कुल देवा।।
छू कर उनका हाथ, दिशा दक्षिण तुम मुड़ना।
करती सिया विलाप, दिखा यह पथ, खग, उड़ना।।

९२
हनुमान का मुद्रिका गिराना

कहती सिया अशोक से, देना डाल अंगार।
चिता जला कर मैं मरूँ, करो विनय स्वीकार।।
करो विनय स्वीकार, नहीं तुम सा हितकारी।
कपि ने अवसर जान, अँगूठी थी भू डारी।।
देख मुद्रिका आँख, अश्रु धारा थी बहती।
कपि तव अति उपकार, सिया पुनि पुनि थी कहती।।

९३

सीता का हनुमान को संदेश

करना आ कर नाथ हे, मेरा भी उद्धार।
पड़ी दुष्ट के हाथ हूँ, स्वर्णिम कारागार।।
स्वर्णिम कारागार, प्रिया तव पत्नी प्यारी।
घेरें मुझको देव, असुरियाँ अति भयकारी।।
आ न सके यदि आप, पते, निश्चित मम मरना।
खायेंगे खल भून, राम, देरी मत करना।।

९४

कपि द्वारा सिया को ढाढ़स देना

आशा की महिमा बड़ी, भरे चित्त उत्साह।
बीहड़ वन के बीच भी, प्रकट दिखाती राह।।
प्रकट दिखाती राह, घना तम पल में छँटता।
कहते कपि दृढ वाक, सिया का भ्रम था कटता।।
मन से अपने, मात, भगा भय, भ्रांति, निराशा।
भरो भव्य शुभ भाव, नहीं हत हो तव आशा।।

९५

हनुमान द्वारा लंका-दहन

सीता को संदेश दे, उपवन दिया उजाड़।
कपि ने खा भर पेट फल, फेंके पेड़ उखाड़।।
फेंके पेड़ उखाड़, हने दानव रखवाले।
रावण सुत को मार, बँधे रस्सी मतवाले।।
आग लगी जब पूँछ, किए सब जन भयभीता।
दहन करी थी लंक, हुई सुन हर्षित सीता।।

९६

प्रभु समक्ष हनुमान की विनम्रता

मेरा कुछ मुझमें नहीं, सब कुछ तेरा नाथ।
बल तप यश गुण है तभी, जब मम शिर तव हाथ।।
जब मम शिर तव हाथ, कहें प्रभु से हनुमंता।
सागर तरा अपार, भिड़े जब खल बलवंता।।
खाये जब फल तोड़, मुझे असुरों ने घेरा।
राम राम कह राम, बढ़ा था बल तब मेरा।।

९७

सेतु-निर्माण

राघव बैठे ध्यान में, सागर के शुचि तीर।
कैसे निर्मित सेतु हो, निश्चित करते धीर।।
निश्चित करते धीर, संग सहस्र दल वानर।
करते झटपट काम, राम की आज्ञा पाकर।।
हुआ सेतु बन पूर्ण, किया श्रम मिल कपि मानव।
बृहत सिंधु कर पार, गए तब लंका राघव।।

९८

अंगद की रावण को सुमंत्रणा

मंगल यदि निज चाहता, गह पद प्रभु के, भूप।
भव सागर से पार हो, तज दे अघ का कूप।।
तज दे अघ का कूप, कहे कपि, सुन, हे रावण।
हिय धर मेरी सीख, हठी, कर मन को पावन।।
देंगे तुझको दान, दया का निज-जन-वत्सल।
लौटा सीता मात, प्रजा हित वर ले मंगल।।

९९

लंका पर आक्रमण

सैनिक धर कर वेश प्रभु, खड़े हैं सिंधु तीर।
उछल उछल उत्साह से, पग धोता है नीर।।
पग धोता है नीर, करें आज्ञा रघुवीरा।
दुर्गम लंका कोट, चढ़ें वानर रणधीरा।।
कोटि कोटि रिपु मार, विजेता बनते दैनिक।
कैसे मरे लंकेश, करें विचार सब सैनिक।।

१००

लक्ष्मण की मूर्छा

रावण का आदेश पा, लड़ा रण इंद्रजीत।
नाग पाश था साधता, करता अरि भयभीत।।
करता अरि भयभीत, शक्ति तिस लक्ष्मण मारी।
मूर्छा छायी देह, घड़ी अति थी भयकारी।।
कपि ने दिया उबार, संजीवनी ला पावन।
पाकर शक्ति नवीन, हना लक्ष्मण, सुत-रावण।।

१०१

त्रिजटा का स्वप्न

सपना देखा भोर में, मैंने सखियों आज।
निश्चित होगा सत्य वह, सुनो छोड़ सब काज।।
सुनो छोड़ सब काज, बड़ा भविष्य भयकारी।
होगी लंका नष्ट, पराजय युद्ध हमारी।।
गह सिय पद हठ त्याग, वरो सब शुभ तुम अपना।
कहती त्रिजटा बात, सुनाती सबको सपना।।

१०२

रावण-वध

जीता राघव युद्ध था, मान विभीषण बात।
रावण पर पाई विजय, किया नाभि पर घात।।
किया नाभि पर घात, अमी का जिस में वासा।
मारा पापी घोर, हुआ अधर्म का नासा।।
हन कर लंका भूप, करी स्वतंत्र थी सीता।
धर कर धैर्य अपार, बली दानव था जीता।।

१०३

भारत भूमि की महिमा

भारत की भव्य सभ्यता, भद्र भाव भरपूर।
पलते पावन गोद में, सुजन सुसंस्कृत शूर।।
सुजन सुसंस्कृत शूर, सदा शुचि शुभ सत साधक।
मंगल मग के मीत, अथक अविरत आराधक।।
स्वार्थ सिद्धि को त्याग, सतत सश्रम सेवारत।
क्या लंका का मोल, स्वर्ग से सुंदर भारत।।

१०४

भरत-मिलाप

चढ़कर पुष्पक यान में, चले अयोध्या राम।
करके कारज पूर्ण सब, लौट रहे निज धाम।।
लौट रहे निज धाम, पिता के प्रण के धारी।
राघव की जयकार, भरी भू नभ दिश चारी।।
उतरा जभी विमान, भरत तब आगे बढ़कर।
पूज अर्च कर भ्रात, चले ले गृह रथ चढ़कर।।

१०५

माँ कौशल्या की ममता

ममता माँ की बह रही, छलके दृग से नीर।
गिरता स्तन से दुग्ध है, वय मर्यादा चीर।।
वय मर्यादा चीर, गोद बैठाती माता।
राम राम कह राम, नेह मुख घुलता जाता।।
हृदय न धरता धीर, वेग न हर्ष का थमता।
कितने बरसों गौण, रही होकर हिय ममता।।

१०६

उर्मिला-लक्ष्मण मिलन

आगे आई उर्मिला, आए देख सौमित्र।
लखती प्रिय को विरहिनी, मंत्र मुग्ध ज्यूँ चित्र।।
मंत्र मुग्ध ज्यूँ चित्र, पड़ी पद पंकज पति के।
हर्षाती भर नैन, मुदित तज बंधन मति के।।
मैं अवध तुम अरण्य, बँधे फिर भी इक धागे।
गया विषम पथ बीत, आनंद मग अब आगे।।

१०७

राम का राज्य-अभिषेक

राघव, अब तव तिलक हो, बोले अनुज पुकार।
सिंहासन पर राजिए, स्वस्ति मंगलाचार।।
स्वस्ति मंगलाचार, दिशा दश पर्व विराटा।
भव्य अति समारोह, सजे गृह पथ पुर हाटा।।
बरसे नभ से फूल, मोद मन सुर-मुनि-मानव।
मुकुट जड़ित शिर धार, हुए कोसलपति राघव।।

१०८

राम-राज्य

रघुवर जबसे राजते, आकर कोसल देश।
बालक वृद्ध प्रसन्न सब, हर्षित प्रजा विशेष।।
हर्षित प्रजा विशेष, नहीं जन दीन दुखारी।
विपुल मिले धन धान, सुखी सब गण दिश चारी।।
नृप के सब कर्तव्य, बता समझाते गुरुवर।
धर्म ज्यूँ मूर्तिमान, अवध के राजा रघुवर।।

हिन्द व हिन्दी का सम्मान
है प्रमाण देशभक्ति का
आइए करें
सृजन शब्द से शक्ति का

नाम- **गीतांजलि**

जन्म- पठानकोट, पंजाब ०१/०१/१९७१

माताजी- स्वर्गीय श्रीमती लता गोयल

पिताजी- डॉ.मंगतराय गोयल

शिक्षा- इलेक्ट्रिकल इंजीनियर, पंजाब इंजीनियरिंग कालेज, चण्डीगढ़ (१९९१)

निवास- कैलिफोर्निया अमेरिका

लेखनविधा- हिंदी व अंग्रेजी में काव्य व गद्य

इंस्टाग्राम- a.n.k.a.h.i

ट्विटर- @_ankahi

प्रकाशित पुस्तकें- काव्य व गद्य के साँझा संग्रह (सागर के मोती, रंग-बिरंगी, नन्ही फुलवारी, पंच-रश्मि, ये कुंडलिया बोलती हैं)

प्रकाशनाधीन- Salvation of the Elephant King (गजेंद्र मोक्ष का अंग्रेजी काव्य में अनुवाद)

पं.क्र. (04/21/05/207665/19)
अन्तरा शब्दशक्ति
www.antrashabdshakti.com

15, नेहरु चौक, मेन रोड वारासिवनी, जिला- बालाघाट (म.प्र.), पिन 481331
संपर्क- 9424765259, अणुडाक: antrashabdshakti@gmail.com

978-93-5372-227-2

मूल्य 150/-

अन्तरा शब्दशक्ति के लिंक्स

Website:- www.antrashabdshakti.com
Facebook page:- https://www.facebook.com/antrashabdshakti/
Fecbook group:- https://www.facebook.com/groups/antraashabdshakti/